जनहित याचिकाओं की समस्या

जनहित याचिका के बढ़ते मामलों को देखते हुए सरकार ने उच्चतम न्यायालय से अपील की है कि इस पूरे फ्रेमवर्क पर न्यायालय फिर से विचार करे। हाल ही में सबरीमाला मंदिर से जुड़ी कार्यवाही के दौरान सरकार ने यह आग्रह किया है। सरकार को आशंका है कि जनहित याचिका को किसी एजेंडा से जोड़कर उसका दुरुपयोग किया जा रहा है।

कुछ बिन्दु -

- जनहित याचिका की शुरुआत 1970 के दशक में हुई थी। 1979 में इसे पारंपरिक लोकस स्टेंडी के सिद्धांत से हटकर, प्रतिनिधित्व स्टैंडिंग की अनुमति दी गई। यानि कि केवल पीड़ित पक्ष के कोर्ट जाने की जगह अब हाशिए पर रहने वाले समूहों की ओर से तीसरे पक्ष को अपील करने की अनुमति मिली। इस बदलाव से न्यायालय को मुद्दो को खुले तौर पर देखने पर मजबूर किया गया।

- जनहित याचिकाओं के विस्तार के साथ-साथ यह सवाल अक्सर उठता रहा है कि क्या न्यायालय के पास ऐसे मुद्दों से निपटने के लिए संस्थागत क्षमता है। कई मामलों में ऐसा देखा गया है कि न्यायालय विशिष्ट कानूनों को लागू करने का निर्देश देने से इंकार कर देते हैं, और उचित अधिकारियों पर विधायी निवारण छोड़ देते हैं। ऐसे भी उदाहरण है, जहाँ न्यायालय जनहित याचिकाओं पर सुनवाई करते समय, सीधे प्रभावित लोगों को सुने बिना आगे बढ़ीं।

- इन याचिकाओं के साथ समस्या यह है कि मुकदमेबाज खराब तरीके से तैयार की गई याचिकाओं के साथ न्यायालय पहुंच रहे हैं। ये याचिकाएं अक्सर पक्षपातपूर्ण उद्देश्यों से प्रेरित होती हैं। इस कारण से भी न्यायालय इन मामलों को सतही तौर पर निपटाने के लिए मजबूर हो जाते हैं। यह जनहित याचिका की प्रकृति में ही निहित एक समस्या है।

- हालांकि 2013 में उच्चतम न्यायालय ने नियम बनाया था कि रिट याचिका में बुनियादी अधिकारों के उल्लंघन से संबंधित दलील होनी ही चाहिए। ऐसी जानकारी न होने पर रजिस्ट्री याचिका को लिस्ट करने से मना कर सकती है।

- जहाँ तक याचिका पर न्यायालय के निर्देशों की बात है, तो वहाँ कई निर्देशों का स्पष्ट उल्लंघन होता है। अधिकारियों पर अवमानना की कोई कार्यवाही भी नहीं की जाती है।

- न्यायालय के निर्देशों के पालन की निगरानी के लिए एक एमिकस (नियुक्त वकील) होता है। कई बार इनकी भूमिका को इस सीमा तक बढ़ा दिया जाता है कि ये न्याय मित्र अपने अधिकारों से बाहर निकलकर किसी एक पक्षकार के सहयोगी बन जाते हैं। यह विकल्प बिल्कुल गलत है।

- कुल-मिलाकर, इन याचिकाओं पर अच्छी तरह से खोजबीन की प्रक्रिया होनी चाहिए। इन्हें बने हुए कानूनों और उनके कार्यान्वयन पर एक्शन या निष्क्रियता तक ही सीमित रखा जाना चाहिए। उदाहरण के लिए कोई भी समान नागरिक संहिता को लागू करने की मांग करते हुए न्यायालय का दरवाजा नहीं खटखटा सकता।

- दूसरी तरह से कहा जाए, तो जनहित याचिकाओं को इनके मूल स्वरूप तक ही सीमित रखा जाना चाहिए। इसमें हेवियस कार्पस के सिद्धांत को ही आधार बनाकर चलना उचित कहा जा सकता है। छूट इतनी ही हो कि दोनों पक्षकारों में से किसी की अपरिहार्य कारणों से अनुपस्थिति होने पर उनका प्रतिनिधित्व कोई और कर सके। तभी वास्तविक दावों को न्याय मिल सकता है।

(समाचार पत्रों पर आधारित - 01/05/2026)